ए.एफ.आर.

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठः माननीय श्री सतीश के. अग्निहोत्री

रिट याचिका संख्या 6057 सन 2000

आई. के. मनचंदा

बनाम

सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया और अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश

दिनांक 20.11.2006 **को सुनवाई के लिए सूचीबद्ध।**

हस्ता/-
सतीश के. अग्निहोत्री
न्यायाधीश

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ: माननीय श्री सतीश के. अग्निहोत्री, न्यायाधीश

रिट याचिका संख्या 6057 सन 2000

याचिकाकर्ता : आई. के. मनचंदा

बनाम

उत्तरदातागण : सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया और अन्य

उपस्थित: श्री रवि रंजन सिन्हा, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता।

श्री बी.डी. गुरु, उत्तरदाताओं के अधिवक्ता।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश

(20 नवंबर, 2006 को पारित)

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत दायर वर्तमान याचिका में, अनुशासनिक प्राधिकारी/क्षेत्रीय प्रबंधक द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 02.03.2000 (उपाबंध P/2), जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्तगी का दंड दिया गया, और अपीलीय आदेश दिनांक 21.08.2000 (उपाबंध P/3), जिसके द्वारा अपील भी खारिज कर दी गई थी।

2. तथ्य, संक्षेप में, यह हैं कि याचिकाकर्ता, शाखा प्रबंधक, नेमना कला शाखा के रूप में काम करते हुए, को एक आरोप-पत्र दिनांक 01.09.1986 तामील किया गया था। उनके खिलाफ एक जांच की गई। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होते हुए, आदेश दिनांक 01.12.1987 के तहत सेवा से बर्खास्तगी का दण्ड अधिरोपित किया। उक्त आदेश के खिलाफ की गई अपील को अपीलीय प्राधिकारी द्वारा आदेश दिनांक 15.06.1988 के तहत खारिज कर दिया गया था।

3. व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर में एक रिट याचिका, विविध याचिका क्रमांक 1381 सन् 1989, दायर की। उच्च न्यायालय ने, सुनवाई के बाद, निम्नानुसार टिप्पणी किया और अभिनिर्धारित किया:–

> "पूर्वोक्त मामले में विचाराधीन नियम वही है जो वर्तमान मामले में है। सर्वोच्च न्यायालय की अधिमान्य उद्घोषणा को देखते हुए, मुझे श्री आर्य की इस दलील को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि जांच अधिकारी के निष्कर्ष से असहमत होने से पहले अनुशासनिक प्राधिकारी को उसे असहमति के संभावित कारणों को बताते हुए नोटिस देना चाहिए था और याचिकाकर्ता को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अपना दृष्टिकोण रखने का अवसर देना चाहिए था। ऐसा नहीं किया गया है। यह स्वयं आक्षेपित आदेश को दूषित करता है। तदनुसार, अनुशासनिक प्राधिकारी का आदेश दिनांक 01.12.1987 (उपाबंध P/3) और अपीलीय प्राधिकारी का आदेश दिनांक 15.06.1988 (उपाबंध P/5) रद्द किए जाते हैं और मामला अनुशासनिक प्राधिकारी को वापस भेजा जाता है, जो उपरोक्त टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए, इस आदेश की एक प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तारीख से 3 महीने के भीतर कानून के अनुसार अंतिम निर्णय लेगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. याचिका आदेश दिनांक 16.11.1999 (उपाबंध P/1) द्वारा स्वीकार की गई। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर के विद्वान एकल न्यायाधीश का आदेश अंतिम हो गया क्योंकि उक्त आदेश दिनांक 16.11.1999 (उपाबंध P/1) के विरुद्ध कोई अपील/याचिका प्रस्तुत नहीं की गई थी।

5. उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 16.11.1999 (उपाबंध P/1) के अनुसरण में, अनुशासनिक प्राधिकारी–उत्तरवादी क्रमांक 3 ने निम्नानुसार एक नोटिस दिनांक 09.02.2000 (उपाबंध R/1) जारी किया:–

> "सूचना
>
> श्री आई. के. मनचंदा, शाखा प्रबंधक, नेमना कला शाखा (निलंबनाधीन) को श्री जे.डी. मलिक, क्षेत्रीय प्रबंधक, शहडोल द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी की हैसियत से जारी आरोप-पत्र क्रमांक RM/VIG/8/86/3892, दिनांक 01.09.1986 तामील किया गया है।

क्षेत्रों के पुनर्गठन के परिणामस्वरूप, चूंकि नेमना कला शाखा अम्बिकापुर क्षेत्र के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आ गई है, इसलिए अधोहस्ताक्षरी, क्षेत्रीय प्रबंधक, अम्बिकापुर की हैसियत से, जिसे अनुशासनिक प्राधिकारी की शक्तियां प्राप्त हैं, एतद्द्वारा उपरोक्त संदर्भित आरोप-पत्र को अंगीकार करता है और उक्त आरोप-पत्र के संबंध में अनुशासनिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करेगा।

यह भी सूचित किया जाता है कि माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर के आदेश दिनांक 16.11.1999 के अनुसार, जांच कार्यवाही दिनांक 10.01.1987 से 25.04.1987 तक के निष्कर्ष, जिसमें श्री पी.सी. मिश्रा जांच अधिकारी और श्री आर.पी. खजांची प्रस्तुतकर्ता अधिकारी थे, इस उद्देश्य के लिए मान्य रहेंगे।"

6. तत्पश्चात, अनुशासनिक प्राधि कारी उत्तरवादी क्रमांक 3 द्वारा याचिकाकर्ता को निम्नलिखित शर्तों में एक कारण बताओ ज्ञापन दिनांक 14.02.2000 (उपाबंध R/2) जारी किया गया:–

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

-: कारण बताओ ज्ञापन: -

मैंने श्री आई.के. मनचंदा, शाखा प्रबंधक, नेमना कला शाखा (निलंबनाधीन) के खिलाफ आयोजित विभागीय जांच के मामले में जांच अधिकारी श्री पी.सी. मिश्रा के निष्कर्षों का अध्ययन किया है, जो उन्हें तामील किए गए आरोप-पत्र क्रमांक RM/VIG/8/86/3892 दिनांक 01.09.1986 के अनुसरण में थी। मैं जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत हूं। जांच अधिकारी के निष्कर्षों की प्रति, दिनांक 24.09.1987, संलग्न की जा रही है। अधोहस्ताक्षरी, अनुशासनिक प्राधिकारी की हैसियत से, मामले की जांच करने के बाद एक उपयुक्त निर्णय लेगा।

इस बीच, यदि श्री आई.के. मनचंदा जांच अधिकारी के निष्कर्षों के विरुद्ध कोई अभ्यावेदन करना चाहते हैं, तो वे अधोहस्ताक्षरी के समक्ष दिनांक 29.02.2000 को अम्बिकापुर में ऐसा कर सकते हैं, जिसमें विफल रहने पर यह मान लिया जाएगा कि उन्हें जांच अधिकारी के निष्कर्षों के विरुद्ध कोई अभ्यावेदन नहीं करना है और अधोहस्ताक्षरी अंतिम आदेश पारित करने के लिए आगे बढ़ेगा।

7. याचिकाकर्ता ने, *de novo* (नए सिरे से) जांच का विरोध करते हुए और यह दलील देते हुए कि *de novo* (नए सिरे से) जांच कराना न्यायालय की अवमानना है, नोटिस दिनांक 09.02.2000 (उपाबंध R/1) का अपना जवाब अभ्यावेदन दिनांक 20.02.2000 (उपाबंध P/5) के माध्यम से प्रस्तुत किया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने, आदेश दिनांक 29.02.2000 (उपाबंध P/6) द्वारा, यह अभिलिखित करने के पश्चात कि याचिकाकर्ता नोटिस दिनांक 09.02.2000 (उपाबंध R/1) और कारण बताओ ज्ञापन दिनांक 14.02.2000 (उपाबंध R/2) के जवाब में कुछ भी प्रस्तुत करने में विफल रहा, निम्नलिखित दण्ड प्रस्तावित किया:–

"01-आरोप क्रमांक 1- अधोहस्ताक्षरी सहमत है कि आरोप आंशिक रूप से सिद्ध होता है और "सेवा से बर्खास्तगी जो सामान्यतः भविष्य के रोजगार के लिए एक अयोग्यता होगी" का दण्ड प्रस्तावित करता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

02-आरोप क्रमांक 2- अधोहस्ताक्षरी सहमत है कि आरोप आंशिक रूप से सिद्ध होता है और "सेवा से बर्खास्तगी जो सामान्यतः भविष्य के रोजगार के लिए एक अयोग्यता होगी" का दण्ड प्रस्तावित करता है।

03-आरोप क्रमांक 5- अधोहस्ताक्षरी सहमत है कि आरोप आंशिक रूप से सिद्ध होता है और "वेतनमान में एक चरण वेतन की कमी" का दण्ड प्रस्तावित करता है।

04-आरोप क्रमांक 8- अधोहस्ताक्षरी सहमत है कि आरोप पूरी तरह से सिद्ध होता है और "सेवा से बर्खास्तगी जो सामान्यतः भविष्य के रोजगार के लिए एक अयोग्यता होगी" का दण्ड प्रस्तावित करता है।

05-आरोप क्रमांक 10- अधोहस्ताक्षरी सहमत है कि आरोप आंशिक रूप से सिद्ध होता है और "सेवा से बर्खास्तगी जो सामान्यतः भविष्य के रोजगार के लिए एक अयोग्यता होगी" का दण्ड प्रस्तावित करता है।"

8. आगे यह भी कहा गया कि यदि याचिकाकर्ता प्रस्तावित दण्ड के संबंध में कोई अभ्यावेदन या दलील देना चाहता है, तो याचिकाकर्ता को दिनांक 02.03.2000 को सुबह 11 बजे क्षेत्रीय कार्यालय, अंबिकापुर के परिसर में व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाएगा, जिसमें विफल रहने पर, यह मान लिया जाएगा कि याचिकाकर्ता को प्रस्तावित दण्ड के विरुद्ध कोई दलील नहीं देनी है। तत्पश्चात याचिकाकर्ता ने दिनांक 02.03.2000 को एक अभ्यावेदन (उपाबंध P/7) प्रस्तुत किया जिसमें अपने मामले को बचाव प्रतिनिधि के माध्यम से प्रस्तुत करने के लिए एक सप्ताह के समय की प्रार्थना की गई थी। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता को सुनने के पश्चात, याचिकाकर्ता के बचाव प्रतिनिधि से परामर्श के लिए समय देने से इनकार कर दिया, कार्यवाही समाप्त कर दी और सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया अधिकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) विनियम, 1976 के विनियम 4(J) के तहत "सेवा से बर्खास्तगी" का समेकित दण्ड देते हुए आक्षेपित आदेश दिनांक 02.03.2000 (उपाबंध P/2) पारित किया।

9. व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने उप महाप्रबंधक - अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की। अपीलीय प्राधिकारी ने, अपील की सुनवाई के दौरान, दिनांक 10.06.2000 को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान किया। दिनांक 10.06.2000 को, याचिकाकर्ता ने, बचाव प्रतिनिधि के साथ, अपने मामले की तैयारी के लिए कुछ और समय का अनुरोध किया। याचिकाकर्ता को 19.06.2000 तक का समय दिया गया। दिनांक 19.06.2000 को, याचिकाकर्ता ने अपना बचाव प्रस्तुत किया और अपनी अपील पर मानवीय आधार पर विचार करने का अनुरोध किया। अपीलीय प्राधिकारी ने, याचिकाकर्ता के बचाव पर विचार करने के पश्चात, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:–

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "अधोहस्ताक्षरी ने आरोप-पत्र, जांच के निष्कर्षों, प्रदर्शनों, कारण बताओ ज्ञापनों, अंतिम आदेश दिनांक 02/03/2000 का, अपील दिनांक 22/03/2000 एवं उसके दिनांक 19/06/2000 के अभ्यावेदनों के साथ, सावधानीपूर्वक टिप्पणी किया है और यह पाता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने अपने अंतिम आदेश दिनांक 02/03/2000 में, आरोप क्रमांक 1, आरोप क्रमांक 2, आरोप क्रमांक 8 और आरोप क्रमांक 10 के संबंध में, जांच अधिकारी के निष्कर्षों के संदर्भ में उचित तर्क देते हुए अपने स्वयं के निष्कर्ष दिए हैं और "सेवा से बर्खास्तगी" का दण्ड अधिरोपित किया है। अपीलार्थी ने अपनी अपील/लिखित अभ्यावेदनों/व्यक्तिगत सुनवाई में उपरोक्त आरोपों के संबंध में कोई ऐसे नए बिंदु या साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किए जो दण्ड में किसी राहत

या छूट के लिए उसकी अपील पर विचार करने हेतु अधोहस्ताक्षरी का ध्यान आकर्षित कर सकें। अधोहस्ताक्षरी ने यह अवलोकित किया कि अपीलार्थी द्वारा उठाए गए बिंदु केवल अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा न्यायालय के आदेशों के अनुपालन से संबंधित हैं और उसने बैंक में अपनी स्थिति और उसे प्राप्त अन्य लाभों के संबंध में मुद्दों पर चर्चा की है।"

"इसलिए, अधोहस्ताक्षरी यह पाता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पारित अंतिम आदेश दिनांक 02/03/2000 सही हैं और आरोपों को सिद्ध पाता है, जिनके विरुद्ध अपीलार्थी को "सेवा से बर्खास्तगी" का दण्ड दिया गया है। अधोहस्ताक्षरी "सेवा से बर्खास्तगी" के दण्ड को अपीलार्थी के सिद्ध कदाचारों के लिए एक उपयुक्त और न्यायोचित दण्ड भी पाता है। यहाँ यह जोड़ना उचित है कि उठाए गए तकनीकी बिंदु उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों की गंभीरता को कम नहीं करने वाले हैं, जो बिना किसी संदेह के निर्णायक रूप से सिद्ध हो चुके हैं।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"उपरोक्त को देखते हुए, अधोहस्ताक्षरी, अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा उनके अंतिम आदेश दिनांक 02/03/2000 के तहत अपीलार्थी को दिए गए "सेवा से बर्खास्तगी" के दण्ड से सहमत है और "सेवा से बर्खास्तगी जो सामान्यतः भविष्य के रोजगार के लिए एक अयोग्यता होगी" के उसी दण्ड की अधोहस्ताक्षरी द्वारा एतद्द्वारा पुष्टि की जाती है।"

यहाँ यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अपीलार्थी को पहले अंतिम आदेश दिनांक 01/12/1987 के द्वारा बैंक की सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था और एक तकनीकी आधार पर, माननीय उच्च न्यायालय, जबलपुर द्वारा मामले को आदेश दिनांक 16.11.1999 के द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अंतिम निर्णय लेने हेतु समीक्षा के लिए वापस भेजे जाने पर, अनुशासनिक प्राधिकारी ने, मामले की समग्र रूप से समीक्षा के बाद, अपने अंतिम आदेश दिनांक 02/03/2000 के द्वारा "सेवा से बर्खास्तगी" का दण्ड दिया है, इसलिए,

अपीलार्थी की स्थिति 01/12/1987 से केवल एक बर्खास्त कर्मचारी की ही बनी हुई है।

और याचिकाकर्ता की अपील को आदेश दिनांक 21.08.2000 (उपाबंध P/3) द्वारा खारिज कर दिया।

10. पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना, याचिका, जवाब और याचिका के साथ-साथ जवाब में संलग्न दस्तावेजों का परिशीलन किया।

11. याचिकाकर्ता का एकमात्र तर्क यह है कि उत्तरवादी क्रमांक 3—अनुशासनिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर प्रदान किए बिना आदेश पारित किया है और इस प्रकार अनुशासनिक प्राधिकारी/क्षेत्रीय प्रबंधक द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 02.03.2000 (उपाबंध P/2) के साथ-साथ उत्तरवादी क्रमांक 2—अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 21.08.2000 (उपाबंध P/3) दूषित हैं। दस्तावेजों के परिशीलन पर, यह स्पष्ट है कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा एक उचित नोटिस दिनांक 09.02.2000 (उपाबंध R/1) और एक कारण बताओ ज्ञापन दिनांक 14.02.2000 (उपाबंध R/2) जारी किया गया था। तत्पश्चात अनुशासनिक प्राधिकारी ने एक कारण बताओ ज्ञापन दिनांक 14.02.2000 जारी किया कि याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त क्यों न किया जाए। याचिकाकर्ता ने अपना अभ्यावेदन दिनांक 20.02.2000 (उपाबंध P/5) को प्रस्तुत किया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने, याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन पर विचार करने के पश्चात, मामले को व्यक्तिगत सुनवाई के लिए दिनांक 02.03.2000 को नियत किया, जिसमें याचिकाकर्ता द्वारा बचाव प्रतिनिधि की सहायता प्राप्त करने के लिए समय प्रदान करने के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया और अनुशासनिक प्राधिकारी ने दण्ड का आक्षेपित आदेश पारित करने की कार्यवाही की। यह स्पष्ट है कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने अभ्यावेदन पर विचार किया है, लेकिन याचिकाकर्ता को सारभूत रूप से व्यक्तिगत सुनवाई प्रदान नहीं की जा सकी। अपीलीय प्राधिकारी ने, याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई प्रदान न करने की त्रुटि को देखते हुए, याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान करने के लिए एक नोटिस जारी किया। मामले को व्यक्तिगत सुनवाई के लिए दिनांक 10.06.2000 को नियत किया गया था और याचिकाकर्ता के अनुरोध पर मामले को 19.06.2000 तक के लिए स्थगित कर दिया गया था और याचिकाकर्ता को अगली तारीख, यानी, 19.06.2000 को पर्याप्त सुनवाई प्रदान की गई थी। अपीलीय प्राधिकारी ने, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने के पश्चात, अपीलीय आदेश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

दिनांक 21.08.2000 (उपाबंध P/3) पारित किया। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने रिपोर्ट में विकृति जैसा कोई अन्य बिंदु नहीं उठाया है, कि निष्कर्ष किसी भी साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है।

12. सर्वोच्च न्यायालय ने, *पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य बनाम कुंज बिहारी मिश्रा* के मामले में, जब अनुशासनिक प्राधिकारी जांच प्राधिकारी से असहमत हो तो अवसर देने के प्रश्न पर विचार करते हुए, निम्नानुसार टिप्पणी की थी:-

> "17. ये टिप्पणी स्पष्ट रूप से *बिमल कुमार पंडित* मामले में पहले उद्धृत किए गए टिप्पणीयों के अनुरूप हैं और पहले चरण पर ही लागू होंगे। उपरोक्त अंश स्पष्ट रूप से इस आवश्यकता को उजागर करते हैं कि वह प्राधिकारी, जो अंततः एक प्रतिकूल निष्कर्ष अभिलिखित करने वाला है, ताकि-अपचारी अधिकारी को सुनवाई का अवसर दिया जा सके। यदि जांच अधिकारी ने प्रतिकूल निष्कर्ष दिया होता, तो *करुणाकरण* मामले के अनुसार, पहले चरण में कर्मचारी को अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष अभ्यावेदन करने का अवसर दिया जाना आवश्यक था, भले ही जांच अधिकारी द्वारा उन्हें पहले एक अवसर प्रदान किया जा चुका हो। यह तर्कसंगत नहीं होगा कि जब अपचारी अधिकारियों के पक्ष में दिए गए निष्कर्ष को अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पलटने का प्रस्ताव हो, तो कोई अवसर प्रदान नहीं किया जाना चाहिए। जांच का पहला चरण तब तक पूरा नहीं होता जब तक कि अनुशासनिक प्राधिकारी अपने निष्कर्षों को अभिलिखित नहीं कर लेता। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत यह मांग करते हैं कि वह प्राधिकारी, जो अपचारी अधिकारी के विरुद्ध निर्णय लेने का प्रस्ताव करता है, उसे सुनवाई का अवसर अवश्य दे। जब जांच अधिकारी आरोपों को सिद्ध मानता है, तो वह रिपोर्ट अपचारी अधिकारी को दी जानी चाहिए ताकि वह अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अपचारी अधिकारी के लिए प्रतिकूल कोई भी आगे की कार्रवाई करने से पहले एक अभ्यावेदन कर सके। जब, जैसा कि वर्तमान मामले में है, जांच रिपोर्ट अपचारी अधिकारी के पक्ष में है, लेकिन अनुशासनिक प्राधिकारी ऐसे निष्कर्षों से असहमत होने का प्रस्ताव करता है, तो वह प्राधिकारी, जो अपचारी अधिकारी के विरुद्ध निर्णय ले रहा

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

है, उसे सुनवाई का अवसर अवश्य देना चाहिए, क्योंकि अन्यथा उसे बिना सुने ही अपचारी ठहरा दिया जाएगा। विभागीय कार्यवाहियों में, जो अंततः महत्वपूर्ण है, वह अनुशासनिक प्राधिकारी का निष्कर्ष है।"

"19. उपरोक्त चर्चा का परिणाम यह होगा कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को विनियम 7(2) में पढ़ा जाना होगा। इसके परिणामस्वरूप, जब भी अनुशासनिक प्राधिकारी किसी भी आरोप के अनुच्छेद पर जांच प्राधिकारी से असहमत होता है, तो उस आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्षों को अभिलिखित करने से पहले, उसे ऐसी असहमति के लिए अपने अनंतिम कारणों को अभिलिखित करना होगा और अपचारी अधिकारी को अपने निष्कर्षों को अभिलिखित करने से पहले एक अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर देना होगा। जांच अधिकारी की रिपोर्ट जिसमें उसके निष्कर्ष शामिल हैं, को संप्रेषित करना होगा और अपचारी अधिकारी को अनुशासनिक प्राधिकारी को जांच अधिकारी के अनुकूल निष्कर्ष को स्वीकार करने के लिए मनाने का अवसर मिलेगा। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत, जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, यह आवश्यक करते हैं कि वह प्राधिकारी जिसे अंतिम निर्णय लेना है और जो दण्ड अधिरोपित कर सकता है, कदाचार के आरोपी अधिकारी को, अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अधिकारी के विरुद्ध बनाए गए आरोपों पर अपने निष्कर्ष अभिलिखित करने से पहले, एक अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर दे।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

13. *केनरा बैंक एवं अन्य बनाम देबासिस दास एवं अन्य* के एक अन्य मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने, नैसर्गिक न्याय की अवधारणा पर चर्चा करते हुए, निम्नानुसार टिप्पणी किया:–

"19. हाल के वर्षों में नैसर्गिक न्याय की अवधारणा में बहुत परिवर्तन हुआ है। नैसर्गिक न्याय के नियम हमेशा किसी कानून में या उसके तहत बनाए गए नियमों में स्पष्ट रूप से सन्निहित नियम नहीं होते हैं। वे एक कानून के तहत किए जाने वाले कर्तव्य की प्रकृति से विवक्षित हो सकते हैं। किसी दिए गए मामले में नैसर्गिक न्याय का कौन सा विशेष नियम विवक्षित किया जाना चाहिए और उसका संदर्भ क्या होना चाहिए, यह काफी हद तक उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, तथा उस कानून के ढांचे पर निर्भर करता है जिसके तहत

जांच की जाती है। एक न्यायिक कार्य और एक प्रशासनिक कार्य के बीच का पुराना भेद समाप्त हो गया है। एक प्रशासनिक आदेश भी, जिसमें दीवानी परिणाम शामिल हों, नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुरूप होना चाहिए। 'दीवानी परिणाम' अभिव्यक्ति में न केवल संपत्ति या व्यक्तिगत अधिकारों का उल्लंघन, बल्कि नागरिक स्वतंत्रता, तात्विक अभाव और गैर-आर्थिक नुकसान भी शामिल हैं। इसके व्यापक दायरे में वह सब कुछ आता है जो एक को उसके सामान्य जीवन में प्रभावित करता है।"

"21. तो फिर, न्यायालयों में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की व्याख्या कैसे की गई है और उन्हें किन सीमाओं के भीतर सीमित रखा जाना है? इन वर्षों में, न्यायिक व्याख्या की एक प्रक्रिया द्वारा, न्यायिक प्रक्रिया में, जिसमें अर्ध-न्यायिक और प्रशासनिक प्रक्रिया शामिल है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का प्रतिनिधित्व करने वाले दो नियम विकसित हुए हैं। वे एक निष्पक्ष सुनवाई के मूल तत्व हैं, जिनकी जड़ें निष्पक्ष खेल और न्याय के लिए मनुष्य की सहज भावना में हैं, जो किसी विशेष जाति या देश का विशेषाधिकार नहीं है, बल्कि सभी मनुष्यों द्वारा समान रूप से साझा किया जाता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

पहला नियम 'nemo judex in causa sua' (कोई भी व्यक्ति अपने मामले में न्यायाधीश नहीं होगा) या 'nemo debet esse judex in propria causa sua' (कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं होना चाहिए) है, जैसा कि *अर्ल ऑफ डर्बी के मामले* में कहा गया है - अर्थात, कोई भी व्यक्ति अपने मामले में न्यायाधीश नहीं होगा। कोक ने इस रूप का उपयोग किया *aliquis non debet esse judex in propria causa, quia non potest esse judex et pars* (Co. Litt. 1418) (कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के मामले में न्यायाधीश नहीं होना चाहिए, क्योंकि वह न्यायाधीश और पक्षकार दोनों नहीं हो सकता), अर्थात, कोई भी व्यक्ति अपने मामले में न्यायाधीश नहीं होना चाहिए, क्योंकि वह न्यायाधीश के रूप में कार्य नहीं कर सकता और साथ ही एक पक्ष भी नहीं हो सकता। 'nemo potest

esse simul actor et judex' (कोई भी एक ही समय में वादी और न्यायाधीश नहीं हो सकता) रूप का भी कभी-कभी उपयोग किया जाता है। दूसरा नियम है 'audi alteram partem' (दूसरे पक्ष को भी सुनो), अर्थात, दूसरे पक्ष को सुनो। कभी-कभी, और विशेष रूप से महाद्वीपीय देशों में, *audietur et altera pars* (दूसरे पक्ष को भी सुना जाएगा) रूप का उपयोग किया जाता है, जिसका अर्थ बहुत हद तक एक ही बात है। उपरोक्त दो नियमों से, और विशेष रूप से *audi alteram partem* (दूसरे पक्ष को भी सुनो) नियम से एक उपसिद्धांत निकाला गया है, अर्थात्: *qui aliquid statuerit parte inaudita altera, aequum licet dixerit, haud aequum fecerit* (वह व्यक्ति जो दूसरे पक्ष को सुने बिना कोई निर्णय करेगा, यद्यपि उसने जो कहा वह सही हो सकता है, पर उसने जो किया है वह सही नहीं होगा) —अर्थात, वह जिसने दूसरे पक्ष को सुने बिना कुछ भी निर्णय लिया है, यद्यपि उसने जो कहा हो वह सही हो, पर उसने जो किया है वह सही नहीं होगा (देखें *बोसवेल का मामला* [Co. Rep. पृष्ठ 52a पर]); या दूसरे शब्दों में, जैसा कि अब इसे व्यक्त किया जाता है, न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि स्पष्ट रूप से होता हुआ भी दिखना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"जब भी किसी आदेश को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में होने के कारण अमान्य मानकर रद्द कर दिया जाता है, तो मामले का कोई अंतिम निर्णय नहीं होता है और नई कार्यवाही खुली रहती है। जो कुछ भी किया जाता है वह है उसकी अंतर्निहित त्रुटि के कारण आक्षेपित आदेश को रद्द करना, लेकिन कार्यवाही समाप्त नहीं होती है।"

14. *विवेकानंद सेठी बनाम अध्यक्ष, जम्मू एंड कश्मीर बैंक लिमिटेड एवं अन्य* के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं:–

"22. यह सर्वमान्य है कि प्राकृतिक न्याय का सिद्धांत एक अनियंत्रित घोड़ा नहीं है। जब तथ्य स्वीकार किए जा चुके हों, तो जांच केवल एक खोखली औपचारिकता मात्र रह जाती है। यहां तक कि विबंधन (estoppel) का सिद्धांत

भी लागू होगा [देखें: *गुरजीवन गरेवाल (डॉ.) बनाम डॉ. सुमित्रा दाश*]। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन उस प्रकरण की यथार्थ स्थिति के संदर्भ में किया जाना अपेक्षित है। इसे किसी अनम्य सूत्र में नहीं बांधा जा सकता। इसे वास्तविक तथ्यों और परिस्थितियों से पृथक रहकर एक रिक्त स्थिति में लागू नहीं किया जा सकता। (देखें: *पंजाब राज्य बनाम जगीर सिंह* तथा *कर्नाटक एस.आर.टी.सी. बनाम एस. जी. कोट्टूरप्पा*)"

15. *रंजीत सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य* के प्रकरण में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं:–

"22. इस न्यायालय के उपर्युक्त निर्णयों के आलोक में अब यह विधिसम्मत रूप से स्थापित हो चुका है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करना अनिवार्य था। साथ ही, उसे अभिलेखों पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करना भी आवश्यक था। जांच अधिकारी ने जो निष्कर्ष निकाले वे अपीलकर्ता के पक्ष में थे। ऐसे निष्कर्षों को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पलटने का प्रयास अपेक्षित था। इस मामले में अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा वांछित शांति का प्रयोग इसी दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए । जैसी नहीं थी, फिर भी वह उस भूमिका से तुलनीय थी। जांच रिपोर्ट अपीलकर्ता के पक्ष में थी, परंतु अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने उन निष्कर्षों से असहमति जताने का प्रस्ताव रखा और इस कारण, केवल प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करना ही नहीं, बल्कि अपीलकर्ता द्वारा कोई कारण बताओ उत्तर प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में, अभिलेखों पर उपलब्ध समस्त सामग्री का नए सिरे से विश्लेषण करना अनिवार्य था।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर आते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अपचारी कर्मचारी (याचिकाकर्ता) को कारण बताओ ज्ञापन पहले ही जारी किया जा चुका है। अपीलीय प्राधिकारी ने मामले पर विस्तृत रूप से विचार किया है तथा याचिकाकर्ता को व्यक्तिगत सुनवाई का पूर्ण अवसर प्रदान किया है। अतः, वर्तमान प्रकरण में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत की आवश्यकताओं का पूर्णतः पालन किया गया है।

17. यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत न्यायिक पुनर्विलोकन का क्षेत्र केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया में त्रुटियों तक सीमित होता है, न कि निर्णय तक। वर्तमान प्रकरण में निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई त्रुटि नहीं पाई गई है और याचिकाकर्ता ने निर्णय में विकृत, दुर्बलता अथवा साक्ष्य की कमी के आधार पर आक्षेपित आदेश पर प्रश्न नहीं उठाया है .

18. उपर्युक्त कारणों एवं विश्लेषण के आधार पर, यह याचिका खारिज की जाती है। प्रकरण की तथ्यों एवं परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, पक्षकारों को वाद-व्यय के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं दिया जाता।

हस्ता/-
सतीश के. अग्निहोत्री
न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

---

1. **(1998) 7 SCC 84**
2. **(2003) 4 SCC 557**
3. **(2005) 5 SCC 337**
4. **(2008) 4 SCC 153**

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

-Translated By Nasreen Khan